काव्य - रूप

आधुनिक हिन्दी काव्य का प्रारम्भ हमने सन् 1900 से माना हैं किन्तु काव्य रूपों का अस्तित्व प्राचीन काल से विद्यमान है । भारतीय एवं पाश्चात्य दोनों काव्यशास्त्रों में कविता को कुछ "प्रकारों" "भेदों" या "रूपों" में विभाजित किया गया है । आधुनिक काव्य रूपों के अन्तर्गत सोनेट, गज़ल, हाइकू आदि विदेशी काव्य रूप हैं जबकि पारम्परिक काव्य रूपों के अन्तर्गत महाकाव्य, खण्ड काव्य, प्रबंध काव्य, मुक्तक, गीति काव्य अर्थात् प्रगीत काव्य आदि काव्य रूपों का दर्शन होता है ।

क्रोचे के मन्तव्य से "काव्य के विभिन्न "प्रकारों" और उनकी "सीमाओं" को शताब्दियों तक इसीलिए बनाये रखा जा सकता है कि उन्हें असीम चतुरता के साथ व्याख्यायित किया गया है, सादृश्य के आधार पर उनका विस्तार किया गया है तथा थोड़ा-बहुत प्रच्छन्न समझौता किया गया है ।" आधुनिक हिन्दी कविता के काव्य रूपों का विकास और उसके विभिन्न अध्ययन इस स्थापना को पुष्ट करते हैं । किन्तु इस स्थापना के साथ-साथ यह भी सत्य है कि तमाम परिवर्तनों के बाद भी कुछ मूलभूत काव्य प्रकार आज भी सुरक्षित हैं । जिनकी व्यावहारिक उपयोगिता है, चाहे दार्शनिक सौन्दर्यशास्त्रीय स्तर पर उनकी उपयोगिता न हो । इसलिए इस अध्ययन में आधुनिक हिन्दी काव्य रूपों का अध्ययन अनुपयोगी नहीं है ।

सर्व प्रथम हम सूत्रबद्धता के आधार पर पद्य के तीन भेद मान सकते हैं :-
§1§ प्रबन्ध काव्य, §2§ निबन्ध काव्य और §3§ मुक्तक काव्य ।

§1§ प्रबन्ध काव्य के अन्तर्गत हम दो काव्य रूपों को स्थान दे सकते हैं - महाप्रबंध, खंड प्रबंध । महाप्रबंध के अन्तर्गत हम चार कोटियों को रख सकते हैं :-
§1§ पुराण, §2§ आख्यान, §3§ चरित काव्य, §4§ महाकाव्य ।

§2§ निबन्ध काव्य के अन्तर्गत देशप्रेम, राष्ट्रीयता, समाज सुधार तथा वैयक्तिक प्रेम और समाज की कुरीतियों संबंधी व्यंग्य दृष्टिगत होते हैं ।

§3§ मुक्तक के दो प्रकार हैं -

§1§ पाठ्य और गेय तथा

§2§ आत्मपरक और वस्तुपरक ।

गेय मुक्तक के अन्तर्गत गीत के दो रूप मिलते हैं -

1§ साहित्यिक या कला गीत और

2§ लोक गीत - 6 प्रकार के होते हैं ।

नीति काव्य या प्रगीत काव्य भी आधुनिक कविता का मनोरम काव्य रूप है ।

प्रबन्ध काव्य वह पद्य रचना है जो छंदोबद्ध रूप में किसी कथा सूत्र का आधार लेकर चलती है । ऐसी रचना में प्रारम्भ, मध्य और अन्त कथा के विकास क्रम के रूप में रहता है और उसमें हम छंदों के क्रम को बदल नहीं सकते । जिस प्रकार किसी भवन में दिवारें, द्वार किसी क्रम से होते हैं और ईटें एक के ऊपर एक क्रम से रखी जाती हैं और ये सभी मिल कर भवन की भव्यता निर्माण करते हैं उसी प्रकार प्रबंध काव्य में भी छंदों का क्रम निश्चित होता है और उसे परिवर्तित नहीं किया जा सकता ।

<u>प्रबन्ध काव्य के लक्षण</u> :

§1§ प्रबन्ध-काव्य का संघटन कथानक के द्वारा किया जाता है ।

§2§ इसमें कहीं कहीं तो युगीन पृष्ठभूमि में किसी महापुरुष या अनेक महा-पुरुषों के जीवन की झांकी और उससे संबंधित घटनाओं का वर्णन किया जाता है ।

§3§ इस काव्य रूप में जीवन का व्यापक चित्रण मिलता है ।

§4§ कहीं कहीं प्रबन्ध काव्य किसी महापुरुष के जीवन की किसी एक या कुछ ही घटनाओं की झांकी प्रस्तुत करता है ।

इन दोनों स्वरूपों के आधार पर प्रबन्ध काव्य के हम दो भेद कर सकते हैं -

1§ महा-प्रबन्ध, 2§ खंड-प्रबन्ध

महाप्रबन्ध में जीवन का विविध घटनाओं के साथ पूर्ण, विशद तथा सजीव चित्रण होता है । प्रायः यह भी आवश्यक है कि महाप्रबन्ध के नायक उत्कृष्ट और उदात्त चरित्रवाले व्यक्ति हों । महाप्रबन्ध को हम चार कोटियों में रख सकते हैं । जैसे -

1§ पुराण काव्य
2§ आख्यान काव्य
3§ चरित काव्य
4§ महाकाव्य

नागरजी, किशोर काबरा, जयनाथ व्यक्ति आदि कवियों ने पुराण की कथाओं एवं उनके चरित्रों को लेकर प्रबंध काव्य अवश्य लिखे हैं - किन्तु इन्हें प्राचीन परम्परा के पुराण काव्य और चरित काव्य नहीं कहा जा सकता । अतः यहाँ इन दोनों का लक्षणों का निरूपण नहीं किया गया । यहाँ केवल एक आख्यान काव्य §श्रवणाख्यान§ और एक महाकाव्य §वीरायण§ मिलता होने के कारण इन दोनों के लक्षणों का निरूपण कर तत् तत् रचना का संक्षिप्त परिचय दिया गया है ।

आख्यान काव्य के लक्षण :

1. इसका कथानक प्रायः काल्पनिक या मिश्रित रहता है ।
2. उस कथानक के नायक से संबंधित जीवनवृत्त और घटनाओं को अत्यन्त रोचक और चमत्कारिक ढंग से वर्णन किया जाता है ।
3. यद्यपि यह पुराण सा विस्तृत नहीं रहता, फिर भी प्रधान कथानक के साथ निरूपित गौण कथाओं का संघटन रहता है । इसे प्रामाणिक बनाने के लिए कभी-कभी ऐतिहासिक स्थानों और नामों का भी समावेश किया जाता है । इन आख्यानों का कथानक शिक्षा प्रदायक होता है ।
4. इसके अन्तर्गत प्रेम, नीति, भक्ति, योग आदि का समावेश होता है और इन्हीं के आधार पर आख्यान के प्रमुख भेद जैसे प्रेमाख्यान, वीर-गाथाएँ आदि रहते हैं । दलपतराम रचित श्रवणाख्यान बड़ा ही उच्च कोटि का आख्यान काव्य माना जाता है, जो 809 छंदों में लिखा गया है।

मंत्र जपो हरिनाम को, पिता परम गुरु जानि ।
मात पिता पद पूंजिहों, प्रभु पद पद्म प्रमानि ।।[1]

उदयशंकर भट्ट (1898 - 1966) के आख्यान काव्य "तक्षशिला" की सांस्कृतिक गुणगाथा की अभिव्यक्ति इस रचना का मुख्य अभिष्ट है ।

गुजरात के आधुनिक हिन्दी काव्य के अन्तर्गत केवल एक आख्यान काव्य और एक महाकाव्य मिलता है । गुजरात के आधुनिक युग के हिन्दी काव्य के प्रणेता और आख्यानकार छीपतराम ने मातृ-पितृ भक्त श्रवण की प्राचीन कथा के आधार पर "श्रवणाख्यान" की रचना की है । यह श्रवणाख्यान महाराजा विश्वविद्यालय बड़ोदरा के हिन्दी विभाग की हिन्दी अनुसंधान ग्रंथमाला प्रकाशन के अन्तर्गत 1970 में प्रकाशित है । इसे डॉ0 मदनगोपाल गुप्त ने विस्तृत भूमिका के द्वारा सुसंपादित किया है । दोहा, कवित्त, सवैया, घरनानुकूल चौपाई आदि 705 छंदों में रचित नौ प्रभावों में रचित है ।

महाकाव्य

महाकाव्य एक ऐसी समन्वित रचना है, जिसमें कथ्य एवं कथन-शैली दोनों की विशेषता प्रकट होती है ।

महाकाव्य के लक्षण :

1) महाकाव्य काफी अंशों में किसी भी विस्तृत महाप्रबंध से साम्य रखता है और उसकी विशेषताएँ महाकाव्य में देखी जा सकती है ।

2) प्रमुख रीति से जो तत्व महाप्रबंध में समाविष्ट हैं वे हैं - कथा, वस्तुवर्णन, चरित्र और भाषा शैली । ये तत्व महाकाव्य में विद्यमान रहते हैं ।

3) महाकाव्य का एक लक्षण सर्वज्ञता है ।

4) महाकाव्य का कथानक व्यापक भूमिका पर आधारित रहता है और इस व्यापक भूमिका का कारण जीवन को समग्र रूप में प्रस्तुत करने का उद्देश्य है ।

---

1. श्रवणाख्यान, तृतीय प्रभाव (दोहा 33) - कविश्वर छीपतराम - पृ0 51

जीवन बहुविध प्रवृत्तियों से युक्त रहता है और प्रत्येक महापुरुष के जीवन के साथ अन्य अनेक व्यक्तियों की जीवन कथाओं का संबंध रहता है । अतएव जीवन के समान ही महाकाव्य की विविधता दो प्रकार की परिस्थितियों में देखी जा सकती है - एक तो वे परिस्थितियाँ हैं, जो महाकाव्य के चरित्र नायक की जीवन घटनाओं से सम्बन्ध रखती हैं और द्वितीय वे परिस्थितियाँ हैं, जो नायक के सम्पर्क में आने वाले व्यक्तियों से सम्बन्ध रखती है । इन सभी घटनाओं और विभिन्न कथा प्रवाहों का समुचित संगठन महाकाव्य के समन्वित समन्वित प्रभाव के लिए आवश्यक है । अतएव महाकाव्य में कथा प्रबन्ध सौष्ठव का रहस्य घटनाओं, प्रसंगों और कथाओं के चयन में निहित रहता है । अनेक घटनाओं का वह तिरस्कार कर सकता है और आवश्यक घटनाओं का वह चयन करता है । इस प्रकार घटनाओं के चयन और विभिन्न कथाओं के संयोजन और संगठन द्वारा महाकाव्यकार अपने कथानक को एक संतुलित रूप देता है ।

गुजरात के आधुनिक हिन्दी काव्य में "श्री वीरायण" नामक एक महाकाव्य लिखा गया है । इसके रचयिता हैं जामनगर से 8-10 कोस की दूरी पर बालोल के पास के छोटे से पला नामक गाँव के निवासी राजकवि फूलदास मोनदास मोनावत । प्रस्तुत महाकाव्य दोहरा एवं चौपाई में लिखा गया है और महावीर जैन धर्म के तीर्थंकर महावीर स्वामी के जीवन पर आधारित है । यह काव्य सात ७ कांडों में निबद्ध है ।

पुराण काव्य में प्रागैतिहासिक घटनाओं का विभिन्न युगों और कल्पों के क्रम में किसी विशेष उद्देश्य के प्रतिपादन अथवा शिक्षा के प्रचार के लिए अनेक चमत्कारी घटनाओं से युक्त विशालकाय महाप्रबंध होता है ।

चरित काव्य भी वर्णनात्मक प्रबंध काव्य है । जिसके अन्तर्गत किसी महापुरुष या वीर व्यक्ति के वीरता एवं साहस से युक्त घटनाओं का वर्णन करते हुए चरित लिखा जाता है और चरित काव्य इतिहास सम्मत और तथ्यात्मक होता है । महाकाव्य जैसे विशाल प्रबंध काव्य में अधिकारित कथा के साथ साथ प्रासंगिक कथा के रूप में जो वृत्तांत आता है उसे आख्यान कहते हैं । प्रासंगिक कथापरक आख्यानों में महाकाव्य की मूल आधिकारिक कथा की पुष्टि होती है ।

खंड - प्रबन्ध (काव्य)

खंड प्रबन्ध में कथा का सूत्र रहता है परन्तु महाप्रबन्ध जैसा विस्तार और वैविध्य उसमें अपेक्षित नहीं है । बिना सर्गों के किसी भाषा में लिखे गये, एक उद्देश्य को लेकर चलनेवाले, छंदों में कथा संगठन की संधि आदि नियमों का ध्यान न रखते हुए अर्थात् महाकाव्य का - सा वैविध्य और विस्तार न रखनेवाले प्रबन्ध काव्य कहलाते हैं और इस काव्य के किसी एक अंग को लेकर लिखे गए खंड-काव्य होते हैं ।

लक्षण

(1) खंड काव्य की कथा समग्र जीवन से संबंधित और विस्तृत नहीं होती, वरन् उसका एक खंड मात्र होती है ।

(2) उसका कथानक किसी विशिष्ट घटना या प्रसंग के चित्रण से संबंध रखता है और वह प्रसंग ऐसा होना चाहिए कि जो किसी भी रूप में पूर्व ज्ञात हो ।

(3) उसमें प्रायः एक छंद का प्रयोग होना चाहिए । यदि सर्ग एक से अधिक हैं तो अनेक छंदों का प्रयोग हो सकता है । इसके अंतर्गत बीच में या सम्पूर्ण खंड काव्य में गीत भी रखे जा सकते हैं ।

(4) इसमें वर्णन रोचक काव्यपूर्ण और मर्मस्पर्शी चाहिए ।

(5) यथावश्यक अलंकृति और चमत्कृति भी इस काव्य में आवश्यक है । कथावस्तु के आनुषंगिक स्वरूप संवाद भी उसमें रखे जा सकते हैं ।

(6) इसके अंतर्गत वर्णन की विशिष्टता, चरित्र-चित्रण की मार्मिकता और किन्हीं एक दो दृश्यों का वर्णन हो सकता है ।

(7) इसकी भाषा शैली प्रसंग के अनुकूल कवित्वपूर्ण होनी चाहिए ।

खंड काव्य में अनेक कथाएँ नहीं रहती । इसलिए कथानक के आधार पर इसमें भावभेद नहीं किया जा सकता परन्तु सर्गों की संख्या, उद्देश्य और गेयत्व के आधार पर हम इनके भेद प्रभेदों का विचार कर सकते हैं । जिस प्रबंध काव्य में एक छंद और एक भाव और उद्देश्य को लेकर रचना की जाय, उसे संघात या एकार्थ खंड काव्य कह सकते हैं और जिसमें एकाधिक भावों और अर्थों का निरूपण हो उसका अनेकार्थ खंड काव्य कहना उचित होगा ।

गुजरात के आधुनिक हिन्दी कवियों में सर्वश्री किशोर काबरा, कविवर अम्बाशंकर नागर, श्री नरेश मेहता आदि के उल्लेखनीय खंड काव्य एवं प्रबन्ध काव्य मिलते हैं ।

नरेश मेहता का शबरी एकार्थ खंड काव्य है । शबरी लिखने का प्रयोजन एक साधारण स्त्री के आत्मिक और आध्यात्मिक संघर्ष का चित्रण करना है । शबरी खंड काव्य में कवि ने शबरी के साधारणत्व को असाधारणत्व प्रदान किया है । चरित्र की - - -

दृष्टि से यदि देखें तो शबरी राम के प्रति अनन्य भक्ति-भावना रखनेवाली एक भोली भाली सामान्य नारी है । प्रस्तुत खंड काव्य में शबरी अपनी जन्मगत निम्नवर्गीयता को कर्मदृष्टि के द्वारा वैचारिक उर्ध्वता में परिणत करती है । यह व्यक्ति के सन्दर्भ में आज भी प्रासंगिक लगता है । सामाजिक मूढ़ता, जड़ता तथा अपने युग के साथ संलाप-हीनता की स्थिति में व्यक्ति केवल अपने को ही जागृत कर सकता है । इसी संघर्ष के माध्यम से स्व पर हो सकता है और व्यक्ति समाज बन सकता है । इस छोटे से खंड काव्य में कवि श्री नरेश महेता ने संकेत के द्वारा यही बात व्यक्त की है । जब भगवान श्रीराम लक्ष्मण सहित ऋषि के आश्रम में पहुँचे तब कवि कहते हैं -

यह धरा, उपनिषद जैसे
वह मन्त्र-देवता उसकी
यह उसकी पूजा ही की
अत्यन्त सरलता उसकी ।[1]

जब शबरी पूजा-प्रसाद लेकर आई और गुरुजी के सन्मुख रख दिया और श्याम वर्ण में प्रभु रामचन्द्रजी के दर्शन किए - क्या प्रभु ने ही रूप धरा है ? शबरी सोचने लगी कि भगवान ने मुझ जैसी शूद्र नारी पर कितनी बड़ी कृपा की कि दुर्गम अरण्य वनों को पार करके उसके पास आए । लक्ष्मण यह दृश्य देखकर अवाक् थे कि शबरी चख-चख करके राम को मीठे बेर देती थी और प्रभु राम आँखों से कृपा बरसाते हुए सहज भाव से शबरी के झूठे बेर खाते थे । श्रीराम जनता से कहते हैं कि -

"शबरी तो जग जननी है
मैं हुआ आज ही पावन"[2]

अंतिम कुछ पंक्तियों में शबरी की दिव्य पवित्र आत्मा का सुन्दर चित्रण किया है । जैसे -

---

1- शबरी - श्री नरेश महेता - पृ० 71
2- शबरी - श्री नरेश महेता - पृ० 78

"थी सुलग उठी शबरी में, योगाग्नि पुण्य ज्वालाएँ,
था दिव्य तेज उस मुख पर, सूरज की स्वर्ण प्रभाएँ ।
आकाश-भागवत की वह, थी प्रथम श्लोक की शबरी
करने कृतार्थ जाती थी, अब स्वर्गलोक शबरी ।।"[1]

महाप्रस्थान खंड काव्य में कवि श्री नरेश मेहता ने राज्य, राज्य व्यवस्था और उस व्यवस्था के दर्शन की अमानवीय प्रकृति एवं प्रवृत्ति को स्पष्ट करना चाहा है । इसी लिए उन्होंने कथा और कथा-पुरुषों की निर्वेद स्थिति तथा मनःस्थिति को ही चुना है क्योंकि निर्वेद की स्थिति में ही मानवीय प्रज्ञात्मकता अपने विवेक रूप में होती है । यह एक अनासक्त मनःस्थिति होती है । अतः अत्यन्त स्पष्ट रूप में समस्याओं के उलझे सूत्रों को और विरोधी गतिविधियों को देख सकती है । प्रस्तुत काव्य में जीवन को परिभाषित करने का सफल प्रयत्न किया गया है ।

"धनुष-भंग"[2] खंड-काव्य काबराजी ने एक नये ढंग से लिखा है । धनुष-भंग एक क्षण का खंड-काव्य है किन्तु उस एक क्षण के अन्तर्गत में कई मन्वन्तरों के इतिहास और जन्म-जन्मांतरों के संस्कार निहित है । क्षण जो पलक झपकाते ही अतीत की वस्तु बन जाता है किन्तु उस झपकी के भीतर उस क्षणबोध के मध्यांतर में वह कई युगबोध छिपाएँ रहता है ।

कवि कहते हैं कि गुलेरीजी की "उसने कहा था" कहानी की शैली पर खंड-काव्य लिखने का यह मेरा नया प्रयोग है । धनुष-भंग में श्रीराम को वरमाला पहनाने के पूर्व सीता के द्वारा संकोचवश एक पल के लिए पलकें झपकाने की क्रिया का कवि ने काव्यात्मक सुन्दर प्रयोग किया है । उस क्षण जनक के पूर्व पुरुष राजा निमि सीता की पलकों पर आ कर बैठते हैं और इक्कीस पीढ़ियों से चलनेवाली धनुष और हल की कहानी प्रतीकों में कहते हैं । धनुष्भंग में जहाँ निःशस्त्रीकरण की झलक मिलती है वहीं पृथ्वी पुत्री सीता में हमको खेतों और खलिहानों की मिट्टी की महक नजर आती है । इसमें कृषकों एवं

---

1. शबरी - श्री नरेश मेहता - पृ० 80
2. काबराजी के खंड काव्य के लिए द्रष्टव्य : हिन्दी के खण्ड काव्य - डॉ० शिवप्रसाद गोयल

श्रमजीवियों का भोला और निष्कलुश व्यक्तित्व उभरता है । कथा के अन्त में निमि का स्वप्न सार्थक होता है और वे सीता की पलकों को छोड़ कर चले जाते हैं । सीता राम को वरमाला पहनाने के लिए आगे बढ़ती हैं । इस तरह हाथ में वरमाला लेकर ठिठकी हुई सीता के द्वारा भोगे गए एक पल की कहानी को शास्त्र शस्त्र और श्रम के तीन आयामी द्वन्द्व से जोड़कर उन्मुक्त प्रकृति की गोद में पनपने वाली कृषि संस्कृति के शाश्वत जीवन दर्शन को इस कृति में कवि के द्वारा उभारा गया है ।

कवि श्री किशोर काबरा का खंड काव्य "परिताप के पाँच क्षण" भी धनुष-भंग की शैली में ही लिखा गया है । उसमें सरौंया पर लेटकर मृत्यु की प्रतीक्षा करनेवाले भीष्म पितामह के अचेतन में चलने वाली उथल-पुथल का चित्रण किया गया है । इस खंड काव्य में अम्बा केन्द्रित महाभारत कथा के युग के नये सन्दर्भों तथा निर्मम आदर्शों को सहृदयता के पक्ष में दी गई चुनौती से जोड़ा गया है । इस खंड काव्य में सभी दृश्य फ्लैश बैक में चलते हैं ।

"नरो वा कुंजरो वा" खंड-काव्य में श्री काबराजी ने अर्द्धसत्य पर टिके हुए द्रोणाचार्य के जीवनदर्शन की प्रतीक कथा का सुन्दर चित्रण किया है । यह कथा दूध के बहाने से प्रारम्भ होकर रक्त के महासागर पर समाप्त होती है । दरिद्रतागृस्त द्रोणाचार्य ने विवशता के वशीभूत होकर जिस अश्वत्थामा को बचपन में दूध के नाम पर आटा घोलकर पिलाया था उसी प्रिय पुत्र अश्वत्थामा के लिए दूध की व्यवस्था करने को वे जीवनभर अपनी साले नमक के भाव बेचते रहें । जब उन्होंने सुना कि अश्वत्थामा मारा गया तब वे कटे धान की तरह धरती पर बिखर गए । वे पूरा वाक्य भी नहीं सुन पाये कि जो अश्वत्थामा मारा गया वह नर था या कुंजर ।

प्रश्न उठता है कि क्या द्रोण का पूरा जीवन अर्द्धसत्य पर टिका हुआ था ? मनुष्य के जीवन की उपलब्धियों का मूल्यांकन मृत्यु के क्षण में होता है । जितनी महान मृत्यु किसी की होती है उतना महान जीवन वो जी चुका होता है । युधिष्ठिर का आधा वाक्य सुनकर ही द्रोण मूर्छित हो गये और युधिष्ठिर बार-बार अपनी बात पूरी करना चाहते हैं परन्तु द्रोण अतीत में खो गए हैं । इस प्रकार इस खंड-काव्य की कहानी मूर्छना और अर्ध चेतना के मध्य फ्लैशबैक में चलचित्र की तरह बीच-बीच में टूटती-जुड़ती आगे बढ़ती है ।

किशोर ≠ काबराजी का उत्तर महाभारत[1] एक नये ढंग से लिखा गया प्रबन्ध काव्य है । इसमें कवि ने षट्विकारों के शमर की और षट्दर्शनों की प्राप्ति का बिम्बात्मक चित्रण किया है । इसमें 6 व्यक्तियों के स्वभाव वैचित्र्य का मनोवैज्ञानिक विश्लेषण है । इस प्रबन्ध-काव्य में पाँच कर्मेन्द्रियाँ और पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ पांडवों के बहिरंग और अंतरंग है और द्रौपदी मन है जो बन्धी रहती है और इनको बाँधे ही रहती है । इस प्रबन्ध काव्य का मूल कथासूत्र है वे प्रश्न जो भीम ने युधिष्ठिर से किये हैं और वे उत्तर जो भीम को युधिष्ठिर ने दिये हैं । इस तरह यह "उत्तर महाभारत" द्रौपदी और पांच पांडवों के अन्तर्जगत में चलनेवाले महासागर का प्रतीकात्मक एवं मनोवैज्ञानिक महाप्रबन्ध है ।

उदाहरण -

"प्राप्ति के कुछ पूर्व जलती है जहाँ पर आग,
प्राप्ति के पश्चात् ही उगता वहाँ परित्याग ।
जिस हृदय में एक दिन कुरुक्षेत्र जलता है,
दूसरे दिन उस जगह हिमशैल गलता है ।"[2]

कविवर डॉ0 अम्बाशंकर नागरजी का "प्रम्लोचा" पौराणिक उपाख्यान पर आधारित सर्वोत्कृष्ठ प्रबन्ध काव्य है । विष्णु पुराण में प्रथम अंश के 15वें अध्याय में कंडु-प्रम्लोचा की कथा प्रचेतामारिया प्रसंग में वर्णित है । प्रचेताओं ने कंडु प्रम्लोचा की कन्या मारिया से विवाह किया जिनसे दक्ष प्रजापति का जन्म हुआ जिनसे मैथुनी सृष्टि का विकास हुआ । प्रस्तुत काव्य का हेतु मानव में निहित संस्कारों की सर्वोपरिता दिखाना है । संस्कार ही मनुष्य को महान बनाते हैं । प्रतिकूल परिस्थितियों में भी संस्कारों के धधकते अंगारे कजला भले ही जाय बुझते कभी नहीं । फूंक मारते ही

1- काबराजी के प्रबन्ध काव्य और उत्तर महाभारत के लिए द्रष्टव्य :

 I§ आधुनिक भारतीय कविता में महाभारत : डॉ0 चनुकांत बांदी
 II§ समकालीन प्रबंध-काव्य : बदायूँ युनिवर्सिटी

2- उत्तर महाभारत - डॉ0 किशोर काबरा - पृ0 3।

वे पुनः प्रज्वलित हो उठते हैं । संस्कारोदय के ये क्षण ही नर को नारायण बनाते हैं । द्रष्टव्य है प्रम्लोचा की निम्नलिखित पंक्तियाँ -

"विषय - वासना से, कजलाई दिव्य देह में
संस्कारों की कोई, चिनगारी
शेष बची थी, अस्ताचलगामी सहस्त्रांशु
के देख तुम नहीं चेते
चेती थी वही चिनगारी । धधक उठे हैं उससे ही
चिर संचित संस्कार तुम्हारे, स्व स्वरूप का बोध -
प्रत्यभिज्ञान हो गया है अब तुमको ।"[1]

जयसिंह "व्यथित" के खण्ड काव्य

सन् 1990 से 1994 की अल्पवधि में व्यथितजी के पाँच खंडकाव्य प्रकाशित हुए हैं - आर्तनाद, राघवेन्द्र, दलितों का मसीहा, बालकृष्ण और कैकेयी के राम । भावाभिव्यक्ति एवं युग बोध की दृष्टि से व्यथितजी के खण्ड काव्यों की लोकप्रियता को नकारा नहीं जा सकता ।

"आर्तनाद" व्यथितजी का केवल तीन सर्गों में विभक्त पहला खण्डकाव्य है । प्रस्तुत खण्ड काव्य में रामायण के बहुश्रुत पात्र राम और रावण को एक नवीन दृष्टिकोण के साथ प्रस्तुत किया गया है । समाज की गतिशीलता के लिए कवि जीवन में राम और रावण अर्थात् सत् और असत् दोनों की अभिष्टता पर बल देता है । कवि की दृष्टि में रावण केवल एक खलनायक या धीरोद्दत पात्र नहीं है अपितु वह प्रखर राजनीतिज्ञ एवं प्रबल मेधावी पुरुष है । अतएव समाज में तर्क और भावना, भौतिकता और आध्यात्मिकता के बीच संतुलन स्थापित होने पर ही जन-जीवन की आर्तनाद से मुक्ति संभव है ।

कवि ने राम-रावण के साथ ही शूर्पणखा, विभीषण, गाँधी, विनोबा सीमान्त गांधी आदि के जीवनादर्शों का युग सापेक्ष संघर्ष भी इस खण्ड काव्य में

1- प्रम्लोचा - डॉ० अम्बाशंकर नागर - पृ० 119

उभारा है । डॉ० काबरा के मतानुसार "यह आर्तनाद किसी देश या जाति का नहीं, वरन् पूरे युग का है, पूरी संस्कृति का है, पूरी सृष्टि का है ।" राम के हृदयपक्ष और रावण के बुद्धिपक्ष दोनों के समन्वय एवं सन्तुलन का पक्षधर कवि कहता है -

घट-घट में तो राम बिराजे, घर-घर दिखता रावण है ।
दोनों का जब मधुर मिलन हो, तब समझो जग पावन है ।

व्यथितजी का दूसरा खण्ड काव्य "राघवेन्द्र" आठ सर्गों में विभक्त है । राम-रावण के समन्वय का हामी "आर्तनाद" का कवि "राघवेन्द्र" में पूर्णतः राम के महिमा-गान के प्रति अनन्यभाव से समर्पित हो गया है । राम ने भीलनी (शबरी), अबला (अहल्या) और पक्षी (जटायु) का उद्धार करके अपनी समदृष्टि का परिचय दिया किन्तु राम के भक्त कहलाने वाले हम आज तक ऊँच-नीच के दल-दल में धँसे हैं ।

कवि ने प्रस्तुत खण्ड काव्य में नारी-समस्या, वर्ण-भेद, दलित उत्पीडन, जीवन में व्याप्त कदाचार आदि समस समस्याओं के चित्रण के द्वारा अपने युग बोध के दायित्व को निभाने की चेष्टा की है । राम अर्थात् सत् की महिमा का निरूपण करते हुए व्यथितजी कहते हैं -

सत् पर ही ब्रह्मांड टिका है, सत् से ही सृष्टि महान ।
सत् का दामन जिसने छोड़ा, समझो वह हैवान समान ।।

"दलितों का मसीहा" कवि का तीसरा खण्डकाव्य है जिसमें बाबा साहब डॉ० आम्बेडकर का जीवनवृत्त पद्यबद्ध है । व्यथितजी ने "आत्मनिवेदन" में लिखा है - "बाबा साहब समानता एवं शोषणविहीन समाज-रचना के पुरस्कर्ता थे । समाज के शोषित, पीड़ित लोगों के दुःखदर्द को देखकर उनका हृदय काँप उठता था । इसलिए वे जीवन पर्यन्त सामाजिक, आर्थिक एवं राजनैतिक समानता के लिए संघर्षरत रहे ।"

बाबा साहेब डॉ० भीमराव आम्बेडकर वास्तव में भगवान बुद्ध, संत कबीर, महात्मा गांधी की परम्परा के महापुरुष हैं । अस्पृश्यता-निवारण, अछूतोद्धार, मानव एकता यही उनके जीवन का लक्ष्य रहा है । कवि ने यथार्थ ही बाबा साहब को "कलियुग की करुणा का स्वामी" कहा है । दलितों का मसीहा डॉ० आम्बेडकर के चरित्रांकन के माध्यम से कवि ने युग का ही नहीं वरन युग-युग का चिरंतन सत्य प्रकट करते हुए कहा है -

"मानव-मानव एक जगत में, एक रक्त की है धारा ।
एक हृदय की धड़कन सबमें, एक जगत है उजियारा ।।

निबद्ध काव्य

यह काव्य भी सूत्रबद्ध रचना है, परन्तु इसमें सूत्र कथा का न होकर भाव या विचार का रहता है । यह काव्य दीर्घ-गीतों और लंबी कविताओं के रूप में रहता है । यदि कथानक का कहीं थोड़ा-बहुत आधार लिया भी जाता है तो वह नाम मात्र का । ऐसे काव्यों का विकास विशेष रूप से हिन्दी साहित्य के आधुनिक युग में ही हुआ है । पूर्ववर्ती युगों में इसका रूप नहीं मिलता ।

निबद्ध काव्य वे कृतियाँ हैं, जिनमें कथा की सूत्रता न होकर किसी भाव या विचार की सूत्रता रहती है । एक प्रकार से ये पद्यात्मक निबंध हैं । इन निबद्ध काव्यों में किसी एक भाव या विचार का सरल शैली में प्रतिपादन किया जाता है । इनमें वैयक्तिक अनुभव, विचार और भाव की विशेष रूप से अभिव्यक्ति की जाती है । हिन्दी साहित्य में निबद्ध काव्य द्विवेदी और छायावाद युग में विशेष रूप से लिखा गया । इसी के आधार पर देशप्रेम, राष्ट्रीयता, समाज सुधार तथा वैयक्तिक प्रेम और सामाजिक कुरीतियों से सम्बद्ध व्यंग्य लिखे गये है । पद्य काव्य की यह विधा भी हिन्दी की विशेष देन कही जा सकती है क्योंकि संस्कृत प्राकृत आदि भाषाओं में इसका इस रूप में विकास नहीं हुआ ।

आधुनिक काल में श्री काबराजी, श्री मोहनभाई भावसार आदि के काव्यों में हमें देशभक्ति, व देशप्रेम नजर आता है । डॉ० भागवतशरण अग्रवालजी के हाइकु तथा गीतों में कहीं हमें राष्ट्रीयता नजर आती है तो कहीं हमें व्यंग्य नजर आते हैं । श्री अविनाशजी, कविवर नागरजी आदि के काव्यों में हमें वैयक्तिक प्रेम, मनोवैज्ञानिकता आक्रोश आदि तत्व नजर आते हैं । अर्थात् आधुनिक काव्य के निबद्ध काव्य के अंतर्गत हमें किसी भाव या विचार की सूत्रता मिलती है । अपनी बात स्पष्ट करते हुए कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है । जैसे श्री भागवतशरण अग्रवाल के काव्य संग्रह "बस !तुम हो तुम" में प्यार का भाव नजर आता है –

यदि कहो तो, इन क्षणों के मौन में संगीत भर लूँ,
देवता को साक्षी कर, प्रणय बंधन अमर कर लूँ ।
गूँथ लूँ आकाश गंगा आज वेणी में तुम्हारी,
नाचते-गाते सितारों से तुम्हारी मांग भर दूँ ।[1]

प्रस्तुत पंक्तियों में हमें व्यंग्य की झलक नजर आती हैं :-

अच्छा है तुम्हारा नगर
अच्छे हैं तुम्हारे नागरिक ।
एक बात बताओ दोस्त
यह "नागरिक" नाग से ही बना है न ?[2] - डॉ० किशोर काबरा

आधुनिक कवयित्री मंजु भटनागर "महिमा" का आक्रोश प्रस्तुत है -

छला जा रहा मानव का विश्वास
धर्म-अधर्म, उचित-अनुचित,
न्याय-अन्याय के बीच डोल रहा
मानव का अहसास, पर सोचो तनिक
सब कुछ विध्वंस होने के बाद
क्या बच रहेगा तुम्हारे पास ?
बस कुछ मुट्ठी राख और आहत मानवता का अभिशाप ।[3]

1- बस ! तुम ही तुम : "यदि कहो तो ...." - डॉ० भगवतशरण अग्रवाल - पृ० 32

2- गुजरात : समकालीन हिन्दी कविता - डॉ० अम्बाशंकर नागर - पृ० 3
डॉ० किशोर काबरा - नागरिक

3- नयी धरती नया आकाश : डॉ० अम्बाशंकर नागर - पृ० 27
मंजु भटनागर "महिमा" - "अग्निबुद्ध"

मुक्तक

मुक्तक काव्य की परम्परा हमें प्राचीन काल से प्राप्त होती है और संस्कृत में अनेक प्रकार का मुक्तक काव्य मिलता भी है । मुक्तक एक पद्य या छंद में परिपूर्ण रचना है, जिसमें किसी प्रकार का चमत्कार पाया जाता है । व्यापक रूप से मुक्तक अनिबद्ध काव्य है । इसमें किसी कथा या विचारसूत्र की अपेक्षा उस छंद या पद्य को समझने के लिए नहीं रहती क्योंकि वह अपने में ही परिपूर्ण होता है । संस्कृत साहित्य के आधार पर मुक्तक अनिबद्ध काव्य का एक भेद है । अग्नि पुराण में मुक्तक की परिभाषा इस प्रकार दी गई है । "मुक्तक" श्लोक "एवैकृश्चमत्कार क्षमः सताम्" अर्थात् एक छंद में पूर्ण अर्थ एवं चमत्कार को प्रकट करनेवाला अनिबद्ध काव्य मुक्तक कहलाता है । पूर्वापर सम्बन्ध निरपेक्ष पद्य को भी मुक्तक कहा गया है । आधुनिक हिन्दी कविता प्रबन्ध काव्य की अपेक्षा गुण और परिमाण दोनों की दृष्टि से मुक्तक रूप में अधिक लिखी गयी हैं । हिन्दी का आधुनिक मुक्तक काव्य अपने काव्यरूप की दृष्टि से पाश्चात्य काव्य से विशेष रूप से प्रभावित और प्रेरित रहा है । इसलिए वह हर कविता जो कथात्मकता और क्रमबद्ध विस्तृत वर्णन से मुक्त, आकार में लघु और स्वतः पूर्ण है, मुक्तक कहलाती है ।

मुक्तक के दो प्रकार हैं -

1) पाठ्य और गेय

2) आत्मपरक और वस्तुपरक

आत्मपरक गेय मुक्तक ही प्रगीत अथवा गीतिकाव्य के रूप में हिन्दी में प्रचलित हैं । हिन्दी साहित्य के पूर्ववर्ती युगों में मुक्तक रचनाओं के लिए विशेष रूप से प्रयुक्त छंद, दोहा, सोरठा, सवैया, छप्पय, कुंडलिया और घनाक्षरी हैं । परन्तु आधुनिक युग में मात्रिक छंद दोहा का विशेष प्रचार प्रसार हो रहा है । हाईकू, गजल गीत आदि के साथ आधुनिक कवि "दोहा" भी विपुल संख्या में लिखते हैं । गेय मुक्तक काव्य के भी दो प्रकार हैं -

1) साहित्यिक या कला गीत

2) लोक गीत

§1§ कलागीत : साहित्यिक अलंकृत शैली पर लिखे गए ये गीत हैं, जिनमें भावों और विचारों को परिमार्जित, शिष्ट नागरिक भाषा में प्रस्तुत किया जाता है । ये भी वस्तु परक और भावपरक दो प्रकार के हो सकते हैं ।

§2§ लोकगीत : सहज और स्वाभाविक उद्गार के रूप में प्रकट होते हैं । ये हमारे लोक जीवन में विविध संस्कारों, क्रिया-कलापों, उत्सवों, त्यौहारों, ऋतुओं में गाए जाते हैं । प्रायः लोकगीत वे कहे जाते हैं, जिनका लेखक अज्ञात होता हैं और अनेक जिह्वाओं पर गाते-गाते जो सहज परिष्कार पा चुके होते हैं परन्तु आज कुछ प्रसिद्ध कवियों के द्वारा लोकगीत शैली में लिखे गए गीत भी मिलने लगे हैं, जो इस बात के द्योतक है कि लोकगीत में कवित्व का नैसर्गिक आकर्षण है । इसके अन्तर्गत जीवन सहज आशाओं, आकांक्षाओं, हर्ष-विषाद, खीझ, उल्लास आदि के रूप में बहता रहता है ।

लोकगीत के भी दो भेद हैं - भाव प्रधान और वस्तु या वर्णन प्रधान ।

भाव प्रधान गीतियों के अनेक रूप हमारे ग्रामीण समाज के बीच प्रचलित है जिनके प्रमुख प्रकार निम्नांकित हैं -

1§ संस्कार गीत,	4§ ऋतु गीत
2§ उत्सव त्यौहार गीत	5§ धार्मिक गीत
3§ दिनचर्या गीत	6§ विविध

यह लोकगीत न केवल हिन्दी काव्य की अमूल्य संपत्ति है, वरन् इसका प्रभाव हिन्दी में गेय काव्य पर अत्याधिक पड़ा है । ये लोकगीत ग्राम्य मनुष्यों और विशेषकर नारियों के द्वारा किसी त्यौहार, उत्सव, संस्कार के अवसर पर या नित्यप्रति काम करते समय गाए जाते हैं ।

आधुनिक काल में विविध प्रकार के मुक्तक प्रचुर मात्रा में मिलते हैं । गुजरात के आधुनिक कवियों में सर्वश्री भगवानदास जैन, कु. मधुमालती चोकसी, अम्बाशंकर नागर, रामकुमार गुप्त, अविनाश श्रीवास्तव आदि के नाम सिद्ध मुक्तककारके रूप में है । भगवतशरण अग्रवालजी का एक मुक्तक देखिए -

रात-दिन संघर्षमय तूफान के भीषण झकोरे ।
जिन्दगी की इस अमावस के नयन में स्याह डोरे ।
कल्पना की तूलिका ने स्वप्नमय जो चित्र खींचे
भाग्य की लहरों में घुल कर आज निकले पृष्ठ कोरे ।[1]

कु. मधुमालती चौकसी का उत्कृष्ट मुक्तक सुन्दर भाषा एवं भावों के साथ प्रस्तुत है -

शिथिलता की भावना के कूल पर जब
उर्मियों के हास का अवतार पाया,
व्यथित प्राणों का सिहरता मौन क्रन्दन
वेदना के आंसुओं में तिलमिलाया ।[2]

आधुनिक काल में मुक्तक कविता का प्रमुख एवं प्रिय रूप गीत और प्रगीत या गीति काव्य है । गीत और प्रगीत की सामान्य विशेषता गेयता हैं, किन्तु दोनों में अन्तर वस्तुपरकता और आत्मपरकता का है । जहाँ संवेदन वस्तुपरक होता है और जहाँ संवेदना व्यक्तिपरक हो, वहाँ प्रगीत होता है । इस विषय में चर्चा करने से पूर्व हम गीतों की विशेषताएँ देखें -

1§ पूरे गीत में एक ही भाव बहता है ।
2§ उसमें व्यक्तिगत अनुभूति का सीधा और सहज प्रकाशन होता है ।
3§ अनुभूति पर प्रभाव डालनेवाले, अवसर विशेष के अनुकूल स्वाभाविक और सहज प्रकाशन परिलक्षित होता है ।
4§ केवल वर्णन नहीं, वरन् भावानुभूति की प्रधानता रहती है ।
5§ गीतगीत अकेले अथवा समूह के द्वारा ढोलक, मंजीरा या अन्य वाद्यों के साथ गाने के लिए उचे गए होते हैं ।

1- बस ! तुम ही तुम : डॉ० भगवतशरण अग्रवाल - पृ० 48
2- भाव निर्झर : कु. मधुमालती चौकसी - पृ० 34

6) अधिकांश शब्दों और पदों की पुनरावृत्ति, उन्हें सहज स्मरणीय बनाने का हेतु है ।

7) अपनी विशेष संस्कृति की झलक दिखाते हुए इनमें विश्वव्यापी भावों का चित्रण होता है ।

गुजरात के प्रमुख एवं सशक्त गीतकारों में डॉ० किशोर काबरा, ललित बुच, ओंकार अग्निहोत्री, चनुपालसिंह यादव, सुश्री प्रणव भारती, कैलाशनाथ तिवारी, सुरेश शर्मा "क्रांति", रामचेत शर्मा, दयाचंद जैन, रामकुमार गुप्ता, रमाकान्त शर्मा आदि विशेष उल्लेखनीय हैं ।

गीतों का जीवानुभूत तत्व है निबिड़ अनुभूति एवं बिम्ब । डॉ० अम्बाशंकर नागर ने गीत में गहरी सच्ची अनुरक्ति एवं प्रबन्ध के महत्व के प्रति अंगुली निर्देश करते हुए लिखा है -

जो लिखो अच्छा लिखो
अनुभूति से सच्चा लिखो
काव्य लिखना हो तो बिम्बों में लिखो
बिम्ब भी ऐसे कि जिन में तुम दिखो ।

अंतिम पंक्ति के द्वारा डॉ० नागर के गीत में कवि के निजी व्यक्तित्व की गहरी मुँहर होने की महत्वपूर्ण बात कही है ।

प्रगीत काव्य या गीति काव्य

गीति काव्य अनुभूति प्रधान काव्य है । इसमें किसी वस्तु या भाव को कवि अपनी अनुभूति में उतारकर प्रकट करता है । गीतियों में कवि की आत्मचेतना और संवेदना झांकती हैं । अनुभूति की तीव्रता में गीति कवि का सहज उद्गार है । अतएव स्वानुभूति इस काव्य का प्रमुख तत्व है ।

विशेषताएँ

1) गीति काव्य गाने योग्य होना चाहिए ।

2) इसके अन्तर्गत स्वानुभूति का प्रकाशन होना चाहिए ।

3) इसमें सुकुमार भावों की घनीभूत एवं तीव्र अभिव्यक्ति होनी चाहिए ।

4) एक गीत में एक ही भाव का प्रकाशन होना चाहिए । हिन्दी में गीति काव्य भी अनेक भेदों - प्रभेदों में मिलता है, जैसे - सोनेट पत्रगीत, प्रलय गीत, वीर गीत, देश गीत, शोक गीत आदि ।

प्रगीत काव्य को अन्य काव्य रूपों से भिन्न करनेवाली विशेषताएँ -

1) यह स्वानुभूति प्रधान होता है अर्थात् इसके अन्तर्गत कवि अपने आंतरिक भावों, इच्छाओं, उत्साह, प्रेरणा, विश्वास, संतोष, समर्पण, वेदना आदि को सीधे ढंग से व्यक्त करता है ।

2) एक प्रगीत, प्रबंध या नाट्य काव्य की भाँति जातीय या राष्ट्रीय विशेषता को प्रकट नहीं कर सकता है ।

3) सम्पूर्ण काव्य में एक ही मर्मस्पर्शी भावना रहती है ।

4) यह कविता वाद्य यंत्रों के साथ गाई जा सकती है । उसके विविध रूप हैं - विनय प्रगीत, कवि गीति और ग्राम गीत ।

"गीत और नवगीत" जिस प्रकार प्रगतिवादी काव्य के विकास की अगली सोपान प्रयोगवादी काव्य है वैसे गीतों के विकास की अगली कड़ी नवगीत है ।

"गीतकारों का गज़ल रचना की ओर झुकना - उन्मुख होना": आजकल कई पुराने गीतकार गज़ल की लोकवाहना को देखकर उसके निर्माण की ओर उन्मुख हुए हैं । अतः पहले जो गीतकार थे वे अब गज़लकार बन गए हैं क्योंकि गीत से गज़ल लिखना आसान है । गज़ल में स्वतंत्रता अधिक है गीत में नहीं ।

चतुर्दशपदी (सोनेट)

गीतिकाव्य में "सोनेट" पश्चिमी यूरोप का अत्यन्त लोकप्रिय काव्य रूप है । इस काव्य रूप का जन्म 13वीं शती में सिसली में हुआ किन्तु इसे प्रसिद्धि और निश्चितता इटली के कवि पेट्रार्क ने दी । इससे सोनेट का "इतालवी" या "पेट्रार्कन" रूप बना, जो एक अष्टपदी तथा एक षट्पदी से मिलकर 14 पंक्तियों का रूप ग्रहण

करता है ।

छायावादी कवियों में प्रसाद, निराला और पन्त ने सोनेट लिखे हैं । छायावाद के बाद सोनेट लिखने की दिशा में महत्त्वपूर्ण प्रयत्न हुए उसमें सर्वप्रथम नाम क़ बालकृष्ण राव था । उनके पश्चात् डॉ0 प्रभाकर माचवे, डॉ0 रामविलास शर्मा और त्रिलोचन के नाम आते हैं । इनके अलावा रामधारी सिंह "दिनकर" नरेन्द्र शर्मा आदि ने कुछ सोनेट लिखे हैं । गुजरात में आधुनिक काल में सोनेट का प्रयोग अधिक नजर नहीं आता किन्तु फिर भी कुछ ऐसे कवि हैं जिन्होंने सोनेट काव्यरूप का प्रयोग अवश्य किया है ।

मगनलाल भूधरभाई पटेल "पतील" ने अपनी नयी तर्जे नामक काव्य संग्रह में गुजरात में इटालियन सोनेट के आयात करने की आवश्यकता बताया है । उन्होंने उद्योगसेतु नामक पेट्रार्क पद्धति का सोनेट जो लिखा है वह "दक्षिणी" में है । उसमें प्रास, अबबअ, अबबअ कडई कडई है । पहले दो पदबंद चार चार पंक्तियों के हैं और अंतिम दो तीन-तीन के । पतील ने अपनी रचनाओं के लिए "पतीलियाँ" शब्द प्रयोग किया हैं ।

> जैसे समयनद पे सेतु साँम्या चलो रि । बनाइए
> सुललित कलाओं के खंभे सहाशिक गाढके ।[1]

हाइकु

हाइकु मूल जापानी काव्य विधा है । यह एक लाघवप्रधान काव्य है । लाघवता की प्रधानता होने से नपे तुले शब्दों का ही प्रयोग अर्थ पूर्ण रूप से दृष्टिगत होता है । उससे अर्थघनता एवं सघनता आती है । जिसमें सौन्दर्यानुभूति के चरम क्षण को या किसी भावोन्मेष को सहज, सरल शैली में अभिव्यक्त कर मानव मन में अन्तर्निहित चरम क्षण की कविता है । यहाँ तो मात्र किसी संकेतों या बिम्बों के माध्यम से कोई

1- नयी तर्जे, उद्योग सेतु (हरिणी) सोनेट - पतील - पृ0 17

एक देखा दृश्य से सौन्दर्य या किसी विशेष मनोभाव से उभारना भर होता है ।

हाइकु 17 अक्षरों में बंधा होता है । शिल्प की दृष्टि से 17 अक्षरी हाइकु 5, 7, 5 अक्षरों की तीन अलग पंक्तियों में आबद्ध होता है । जिसमें अर्थ व्यंजनों एवं मात्राओं की गिनती नहीं होती । यह अक्षरब्रह्म की साधना है ।

मूल जापानी "हाइकु" 17 ध्वनि घटकों या श्रुतियों का आयोजन होता है । यह नियमन भारतीय भाषा के लिए संभव नहीं है । यही कारण है कि भारतीय हाइकुकारों ने 17 अक्षरों के रूप में इसे अंगीकार किया है । एवं मात्राओं तथा अर्थ व्यंजनों को समायोजित कर लिया है ।

हाइकु को त्रिपूल, त्रिपुंड, त्रिवेदी, हैकू, हायकू आदि विविध नामों से जाना पहचाना जाता है ।

हाइकु एक मुक्तक छंद काव्य है । सरलता, सहजता एवं सपाटबयानी हाइकु की विशेषताएँ है । दूसरी विशेषता है कुल 17 वर्णों में 5 - 7 - 5 वर्णक्रम की तीन पंक्तियों के हिसाब से आबद्धता तीसरी विशेषता है ऋतु बोधक पद का प्रयोग अर्थात् प्रकृति का साथ सम्बन्ध । चौथी विशेषता है अर्थ, भाव, विचार आदि । इसमें सांकेतिकता धारण करके एक सांस में बहुत कुछ कह जाते हैं । यही कारण है कि इसे एक श्वासी काव्य कहा है । काका साहेब कालेलकर के मत से -"वह है अल्पाक्षरी पर बहुअर्थवलित है" अर्थात् गागर में सागर सा अर्थ प्रकट होता है ।

प्रो. जगदीश शुक्ल ने हाइकु की शास्त्रीयता पर प्रकाश डालते हुए कहा है - "शास्त्रीय दृष्टि से यह गुणयुक्त, 17 वर्णों का तीन पंक्तियों में आबद्ध छंद है जिसमें अर्थ व्यंजनों एवं मात्राओं की गिनती नहीं होती पर कहीं कहीं यह लंबवत, तिर्यक वक्रया गणयित्री सूत्रात्मक रूप में 15 से 19 श्रुतियों में भी दृश्यायित होता है । इसका टोन गुरू - गंभीर होता है । इसमें चिह्नों या बिन्दुओं के प्रयोग से स्वर आवृत्ति की सूचना दी जाती है । कभी शब्दों की तोड़-जोड़ से अर्थ व्यंजित किया जाता है । क्रिया हो या न हो परन्तु ध्वनि स्पष्ट मुखरित होनी चाहिए और विस्मयादि बोधकता भी ।[1] गागर में सागर-सा अर्थ प्रकट होने के कारण आ. प्र. सिंह के शब्दों यह "मिनिएचर एपिक" है ।[2]

1- आधुनिक हिन्दी साहित्य : गुजरात - डॉ० रामकुमार गुप्त अभिनंदन ग्रंथ पृ०185

2- आधुनिक हिन्दी साहित्य : गुजरात - डॉ० रामकुमार गुप्त अभिनंदन ग्रंथ पृ०186

शुक्ला का कहना है कि गुजराती के इन स्नेहरश्मि, उशनस्, जयंत पाठक, ज.का. पटेल,मोरली आदि हाइकुकारों को देख 1967 में डॉ. भगवतशरण अग्रवाल ने हिन्दी में सर्वप्रथम हाइकु रचे । इनके पश्चात् मुकेश रावल और रमेशचन्द्र "चन्द्र" ने हिन्दी में हाइकु का रचना-कार्य किया ।

रमेशचन्द्र के हाइकु - काव्य में जीवन की विविधता है । लोकरंजन की सामर्थ्य है । प्रकृति का अनुपम सौन्दर्य भी है । जीवन की विषमता का कंट्रास्ट यहाँ बिंबित होता है -

अंधेरा घना / जलेंगे तो कितना ? मिट्टी के दीप ।"
रोज दिवाली / होली ईद मनायें / चाहत हो तो"

इसी प्रकार मुकेश रावल के हाइकुओं में बुद्धि तथा भावनाओं की अनुगूंज बहुत सुन्दर है । उन्होंने प्रेम, मानवीय करुणा, सामाजिक, राजनीतिक, समस्याओं से सम्बद्ध असंख्य हाइकु रचे हैं । हमें उनके हाइकु में व्यक्ति एवं समाज के विभिन्न आयामी जीवन के पक्षों का सहज रूप मिलता है जिनमें चित्रकल्पों की व्यंजनात्मक अनुभूति अनुस्यूत है -

"जलने लगा / सच्चाई का आईना / पाया बहुत /
"जलता दीया / संघर्ष हर पल / नहीं हारता /

इनके हाइकु स्वयं बोलते है । हमें इनके हाइकु में व्यंजना शक्ति का अपूर्व स्त्रोत बहता मिलता है । हाइकुगत सभी विशेषताएँ इनको सफल हाइकुकार के रूप में स्थापित करने में समर्थ हैं ।

डॉ0 भगवतशरण अग्रवाल गुजरात के प्रथम एवं सफल हाइकुकार हैं । हमें उनके हाइकु में प्रेम, मृत्यु, अकेलेपन की अनुभूति, आस्था-अनास्था, संघर्ष, प्रकृति, आसक्ति-अनासक्ति, तप, अभावबोध, आधुनिक संस्कृति का ह्रास, आशा-आकांक्षा, सत्य की प्रतिष्ठा, भय और उसका निरसन, प्रतिशोध, प्रवंचना, अध्यात्म की अनुभूति, स्मृति का माधुर्य एवं स्मृतिजनित पीड़ा, कुटिलता और सरलता की अनुभूति, त्याग और भोग के बीच का द्वन्द, आत्मगौरव एवं आत्म प्रताड़ना, बुद्ध की विभीषिका, नियति, स्वप्नशीलता, अजस्त्र जीवन-रस का बोध, मुग्धता, सुख की कामना, वफा बेवफाई आदि विषयों की लाघवयुक्त अभिव्यक्ति की है ।

उनके हाइकु में प्रेम के नाना रूपों, पक्षों, प्रतिपक्षों, अवस्थाओं, प्रभावों आदि का इतना मितव्ययी वर्णन हमें मिलता है जो प्रशंसनीय है । कहीं कहीं प्रतीकों के माध्यम से सशक्त अभिव्यक्ति भी हमें मिलती है । उदाहरण स्वरूप कुछ हाइकु प्रस्तुत है -

"चढ़ा के फूल / मांगे तुम्हीं से लक्ष्मी
वाह रे भक्त !"[1]

"कहीं न कहीं / कोई बिल्ली ताकती
यही सत्य है ।"[2]

"सीख सके क्या ? आज तक कुछ भी /
कुरूक्षेत्र से ।"[3]

"शिक्षक-दिन / राज्य करे सम्मान /
भिक्षा-धन से ।"[4]

"मृगजल है / सागर जल : प्यास /
बुझी किसकी ?"[5]

शुक्लजी हाइकु एवं मिनी कविता को स्पष्ट करते हुए कहते हैं कि मिनी कविता की गहराई में पैठकर देखें तो पता चलेगा कि मिनी कविता कहीं एक सूत्र के

1- शाश्वत क्षितिज (हाइकु) - डॉ० भगवतशरण अग्रवाल - हाइकु 204 - पृ० 78
2- शाश्वत क्षितिज (हाइकु) - डॉ० भगवतशरण अग्रवाल - हाइकु 43 - पृ० 25
3- शाश्वत क्षितिज (हाइकु) - डॉ० भगवतशरण अग्रवाल - हाइकु 140 - पृ० 57
4- टुकड़े टुकड़े आकाश : डॉ० अग्रवाल - हाइकु 32 - पृ० 39
5- शाश्वत क्षितिज (डॉ० भगवतशरण अग्रवाल - हाइकु 162 - पृ० 64

रूप में, कहीं घुटकुले के रूप में, कहीं पहेली के रूप में दिखाई पड़ती है जबकि हाइकू इन सबसे जूझकर जीवन-संघर्ष को विरोधी बिम्बों के रूप में प्रकट कर, जीने की प्रेरणा देता है इसलिए हाइकु, मिनी कविता से बहुत ऊँची वस्तु है ।[1]

हिन्दी में हाइकु के दो प्रकार स्पष्ट है : प्रथम श्रेणी में वे कविताएँ आती हैं जो मूल से अपरिचय के कारण मूल के रूप विधान अथवा छंद बंधन से मुक्त है । दूसरी श्रेणी में वे कविताएँ आती हैं जो हाइकु के नाम से लिखी गयी है और जिनमें हाइकु के प्रभाव को प्रत्यक्षतः स्वीकारा गया है ।

"तान्का" इस हाइकु के ही गोत्र का है, किन्तु किन्चित् भिन्न है । तान्का को हाइकु का विस्तृत रूप कहा जा सकता है । हाइकु में 17 अक्षर होते हैं । जबकि तान्का 31 अक्षरों से निर्मित होता है । 31 अक्षरों में कवि कैनवास पर एक चित्रकार की तरह एक चित्र खींचता है । लाघव के साथ-साथ दृश्य को उपस्थित कर देने की शक्ति से सम्पन्न कवि ही इन दोनों लघु काव्य रूपों में सफलता पा सकते हैं । तान्का में प्रायः तीन चीजें देखी जाती है । §1§ काव्य का तत्व, §2§ संघट्टीकरन और §3§ सूयत इन तीन तत्व के होने पर भी उसका प्रधान तत्व तो हैं दृश्य संवेदना । काव्य का तत्व दृश्य काव्य के वैविध्य के द्वारा चलता रहता है । संघट्टीकरण याने दृश्य कलापों का मननीय संगुफन जिसके कारण कलागत सौन्दर्य उत्पन्न हो सकता है । सयता से आशय है तान्का में प्रस्तुत किए गये दृश्य कलाप में अन्तर्निहित भाव । आधुनिक काल में यह काव्य रूप विकास की ओर उन्मुख है ।

गज़ल

भारत में मुसलमान आक्रमणकारों के साथ आए हुए सूफी संत फारसी में गज़ल लिखते थे । उन्हीं के द्वारा ही हिन्दुस्तान में गज़ल का प्रचार एवं प्रसार हुआ । बाद में मुगल बादशाहों के दरबार में फारसी में गज़ल कही जाने लगी । जब उर्दू लोक-प्रचलित

1- आधुनिक हिन्दी साहित्य : गुजरात §अभिनंदन ग्रंथ सं० प्रथम 1995§ - डॉ० रामकुमार गुप्त - पृ० 189

भाषा बन गई तब उर्दू के शायरों ने गज़ल को अपनाया ।

मुसलमान शासकों के गुजरात में आने पर गज़ल ने धीरे-धीरे गुजरात में अपनी जड़े जमा ली । मध्यकालीन दयाराम आदि कई कवियों ने गज़लें लिखी हैं । बाद में गुजराती भाषा में भी गज़ले लिखी जाने लगी जिसका सिलसिला आज तक जारी है ।

गुजरात की समकालीन हिन्दी गज़ल : एक सर्वेक्षण नामक अपने लेख में कु० भारती जैन ने गुजरात में हिन्दी गज़लगोई की प्रेरणा के दो स्त्रोत माने हैं -
(1) गुजराती भाषा का समृद्ध गज़ल - साहित्य और
(2) युग प्रवर्तक हिन्दी गज़लकार दुष्यंतकुमार की गज़लों की लोकप्रियता ।

हमारे मतानुसार कु० जैन का प्रथम मुद्दा विशेष महत्वपूर्ण है क्योंकि गुजरात के हिन्दी कवि भी गुजराती के कवियों एवं काव्य प्रवृत्तियों से ऐसे घुलमिल गए हैं कि दोनों ही भाषाओं के काव्य रूप आसानी से एक दूसरे को अपना लेते हैं जैसे दो सखियाँ आपस में एक दूसरे के पहनावे को प्रेम और अधिकार भाव से पहन लेती हैं । अतः गुजरात की हिन्दी गज़लों को एक समर्थ प्रेरणास्त्रोत गुजरात की समृद्ध गज़ल परम्परा है । इसी सिलसिले में डॉ० अम्बाशंकर नागर का यह अभिमत ध्यातव्य है - "गज़ल के साथ तो गुजरात का बड़ा पुराना रिश्ता है । से पहले गज़ल गुजरात में लिखी गई थी । उर्दू शायरों के पिता आदमखली गुजरात में हुए तब से होकर आज तक यहाँ गज़लें लिखी जाती रही है । उर्दू एवं गुजराती दोनों ही भाषाओं में गज़ल प्रवाहमान रही ।

गज़ल अरबी काव्य रूप "कसिदा" से आई है । प्रश्न उठता है कि उसको गज़ल क्यों कहा जाता है ? उत्तर है कि गज़ल उस काव्य विधा का नाम है जिसमें प्रेम, आकर्षण, रूप, मोह, सौन्दर्य, वेदना, आँसू, गुल, बुलबुल, चमन, पतंगा और लैला-मजनूं जैसे प्रेमियों की विविध अवस्थाओं को शब्दों द्वारा अभिव्यक्त किया जाय ।

गज़ल एक विदेशी फारसी काव्य का प्रकार है । वह अरबी भाषा का शब्द है और उसका अर्थ प्रेमयुक्त भाषा में भावों को काव्य रूप में व्यक्त करना है ।

"काफिया" और "रदिफ" ये गज़ल में आनेवाली एक खास प्रकार की प्रास योजना है। इससे ही गज़ल में "तरन्नुम" की रवानी आ सकती है। "मक्ता" याने कि अंतिम शेर में रिवाज के अनुसार शायर का तखल्लुस आता है। गज़ल का प्रमुख विषय प्रेम होता है लेकिन आधुनिक युग के अनेक हिन्दी कवियों ने विविध विषयों पर गजलें लिखी हैं। उर्दू के शायर द्वारा रचित गजल में प्रायः शराब और उससे सम्बद्ध उपकरण, पात्र स्थान आदि अवश्य होते हैं जबकि हिन्दी कवियों की गज़लों में शराब का जिक्र नहीं होता है, जिक्र होता है गंगाजल में घुले तुलसी के पत्ते का, पीपल की छवि का, नीम के दर्द का, आम आदमी की अहम् झकीफों को। युगानुसार गज़ल के स्वरूप में और विषय में भी परिवर्तन होता रहा है। गुजरात के आधुनिक कवियों में से अनेक शायरों ने गज़ल लिखी है, गुजरात की समकालीन हिन्दी गजल के पुष्पित पल्लवित करने में उर्दू शायरों का भी बड़ा योगदान रहा है जिनमें उल्लेखनीय हैं - रहमत शेख आदम आबूवाला सुलतान अहमद, अमरोही, खलिश बड़ौदवी, आदिल मंसूरी, रशीद अफरोज, मुहम्मद अलवी, फना प्रतापगढ़ी, जोजफ अनवर, सशर्फ कुनंद शहरी, जमाल कुरेशी इत्यादि। गुजरात के सशक्त गजलकारों में डॉ० दयानन्द जैन, भगवानदास जैन, रमेशचन्द्र शर्मा "चन्द्र", सुरेश शर्मा "कान्त", रामचेत वर्मा, किशोर काबरा, द्वारका प्रसाद सांचीहर, प्रो० हसित बुच, कु० मधुमालती चोकसी, अश्विनीकुमार पाण्डेय, गोपाल शुक्ल "तपिश", अंजना संधीर इत्यादि उल्लेखनीय है।

गुजरात की हिन्दी गज़ल परम्परा पर एक नजर डालें तो एक ओर हमें रूमानी या इश्क मजाजी तेवन दिखाई देते हैं तो दूसरी ओर समाज की विविध समस्याओं के विद्रूप चेहरे भी साफ दिखाई देते हैं। आधुनिक गज़लों में हमें सामाजिक समस्याओं की प्रधानता मिलती है जैसे स्वार्थ, छल-कपट, टूटते हुए मानवीय सम्बन्ध, शहरी सभ्यता का विषैलापन, कुंठा, संत्रास, अकेलापन, अजनबीपन, शहरीकरण के दुष्परिणाम इत्यादि। आज की गज़लों में साम्प्रदायिकता के विरुद्ध तीव्र व्यंजना मिलती है। वर्तमान भ्रष्ट राजनीति एवं वर्तमान नेताओं के झूठे वचनों, उनकी दोगली नीतिओं एवं भ्रष्टाचार तथा वर्तमान सभ्यता की ऊपरी चकाचौंध आज की गज़ल का विषय बन चुका है। साथ ही प्रेम एवं प्रकृति जो चिरंतन है उसे अपने गजलकार कैसे भूल सकते हैं ? डॉ० अंजना संधीर के गज़ल-संग्रह "बारिशों" का मौसम" में उनका रूमानी अंदाज मिलता है। उनकी एक गज़ल का शेर प्रस्तुत हैं -

तकते तकते राह तेरी बरसात गुज़र गई सजना,
सोने से वो दिन चाँदी सी रात गुज़र गई सजना
दूर दूर दीपक जलते हैं दिल में जले अँधेरा,
कैसे मीठे सपनों की बारात गुज़र गई सजना ।[1]

शेख आदम आबूवाला ने भी प्रेम के मनुहार को कुछ इस प्रकार ही व्यक्त किया है -

तुम आये जिन्दगी में तो बरसात की तरह,
और चल दिये तो जैसे सुनी रात की तरह ।
ये तो कहो कि अहद किया था रहेंगे साथ,
अब क्यों बदल भी जाते हो हालात की तरह ।[2]

आज की समस्याएँ महंगाई, बेरोजगारी, भ्रष्टाचार जैसी कई समस्याएँ आम आदमी को कुंठा और संत्रास के घेरे में ले चुकी है । उनके मानसिक तनाव से उनकी मनःस्थिति को लघोट ढंग से सुल्तान अहमद ने व्यक्त किया है -

क्यों वो तन्हा भटक रहा है यूँ,
घर के मौसम से डर गया होगा ।
रोते-रोते वो हंस पड़ा क्योंकर
दर्द हद से गुज़र गया होगा ।[3]

डॉ० किशोर काबरा ने जीवन के इसी कटु सत्य को हमारे समक्ष उजागर करने का एक सफल प्रयास किया है -

जन्म से लेकर मरण तक दौड़ता है आदमी,
दौड़ते ही दौड़ते दम तोड़ता है आदमी
आँख गिली होंठ ठण्डे और दिल में आँधियाँ
तीन मौसम एक ही तन ओढ़ता है आदमी ।[4]

---

1. आधुनिक हिन्दी साहित्य : गुजरात - डॉ० रामकुमार गुप्त - पृ० 182
2. आधुनिक हिन्दी साहित्य : गुजरात - डॉ० रामकुमार गुप्त - पृ० 182
3. आधुनिक हिन्दी साहित्य : गुजरात - डॉ० रामकुमार गुप्त - पृ० 179
4. आधुनिक हिन्दी साहित्य : गुजरात - डॉ० रामकुमार गुप्त - पृ० 179

साम्प्रदायिक रक्तपात एवं वर्तमान भ्रष्ट राजनीति पर भी आधुनिक गज़लकारों ने करारा व्यंग्य किया है । जैसे -

भूख गरीबी बेकारी क्या लड़ने को नाकाफी है ?
खोद रहे क्यों राम-शिला, बाबर के ठौर ठिकाने लोग
मजहब की बुनियादों पर दुनिया कब तक टिक पायेगी ?
नानक और कबीरा जैसे, ढूंढों कहीं पुराने लोग ।[1] — सुरेश शर्मा "कान्त"

लगता है जैसे मक्का यह राजनेता का किसी
द्वार पीछे के खुले हैं, सामने के बंद हैं ।[2] — रामचेत वर्मा

गनी दर्दवाला कहते हैं कि गज़ल लिखने के लिए शायर को अपने प्राण उंडेलने होते हैं । भीतर में डूब जाना होता है ।

खूब गहेराई में पलती हैं गज़ल
डूब जाओ तो नीकलती है गज़ल ।

गज़ल मूलतः फारसी और उर्दू से हिन्दी में आई है यही कारण है कि उसका प्रभाव यहाँ परिलक्षित होता है -

वक्त कालीन है उसको यूँ तहाकर रख दें
अभी तो फर्श नहीं तन्च गुबारों की तरह
रे हवा ! लौट के आये तो जरा बतलाना
खड़े हैं हम भी बियाबों में चिनारों की तरह ।[3]
— द्वारका प्रसाद साँचीहार

आधुनिक काल में आंचलिकता का पुट देने के लिए कुछ कवियों ने ग्राम्य स्वरूप में शब्दों का प्रयोग किया है जैसे -

---

1. आधुनिक हिन्दी साहित्य : गुजरात - डॉ० रामकुमार गुप्त - पृ० 180
2. आधुनिक हिन्दी साहित्य : गुजरात - डॉ० रामकुमार गुप्त - पृ० 180
3. आधुनिक हिन्दी साहित्य : गुजरात - डॉ० रामकुमार गुप्त - पृ० 182

हर इक चेहरे पे हसरत से नजर मेरी ठहरती है,
मिले शायद कोई अपना अपरिचित इस नगरिया में ।
संवरने से ही पहले जब हर इक सपना बिखर जाए
लगे फिर आग नागिन सी विछोही इस उमरिया में ।[1]

– भगवानदास जैन

सागर महाराज को गजलगो कह सकते हैं – नृसिंहाचार्य और रंग अवधूत को नहीं । क्योंकि सागर महाराज की सारी कविताओं में गज़ल श्रेष्ठ है । सागर की गज़लें शास्त्रीयता का भी निर्वाह करती हैं जबकि अन्य दो की गज़लों में आवश्यक पाबंदियाँ भी पुरती नहीं है । गुजरात के कुछ आधुनिक संत भक्तों ने भी गजलों की लोकप्रियता एवं कलात्मकता से आकृष्ट होकर अपने भक्तिभावों, प्रेमानुभूतियों आदि की अभिव्यक्ति के लिए गजलों को आजमाया है । भक्ति एवं अध्यात्म परम्परा के दिवंगत नृसिंहाचार्य, सूफी कवि सागर की गज़लें उल्लेखनीय है । नृसिंहाचार्य के पदों की भाषा संस्कृत के तत्सम शब्द लिए हुई है । जबकि उनकी गज़लें लोकभोग्य भाषा में लिखी गई है ।

गज़ल में भी सूक्ष्म आध्यात्मिक अनुभूतियों को कितनी सफलता के साथ व्यक्त किया जा सकता है इस बात की निदर्शक है नृसिंहाचार्य की गज़लें ।

मियां सुन लो तुम, हम कैसे हैं, हम जैसे के तैसे हैं ।
यहीं आये कहूँ यहीं जाइंगे, तुम मत सोच करो हरदम ।
यहीं को मजनहार हम हैं, आपे खुदा है हरदम हम ।

आदि अनाद ऐसे हैं, मिया सुन लो तुम हम कैसे हैं ।
हम नहीं लाये, कुछ नहीं खोया, नहीं हंसते नहीं रोते हैं ।
माया के घर में घुस गये सो, उलट पुलट यूं जोते हैं
जाते हैं सो तो नहीं ने है, मिया सुन लो तुम हम कैसे है ।[2]

---

1. आधुनिक हिन्दी साहित्य : गुजरात – डॉ० रामकुमार गुप्त – पृ० 183
2. गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी – डॉ० नागर, डॉ० पाठक पृ० 447

सागर महाराज की सूफी गज़लों की एक झांकी देखिए -

राजे बका खोलूं अगर । जो हुकम दे दो । या रहीम,
वादे फना बोलूं फिगर "सागर" भरो हरदम सनम । राजे बका खोलूं.....
मौके पे जो कुछ आ मिला उसमें बड़ा आराम है
"सागर" फकीरी शाही को हरदम हमारी सलाम है । राजे बका खोलूं....[1]

हम यह कह सकते हैं कि गुजरात की आधुनिक हिन्दी गज़ल आज भी समूची हिन्दी कविता के साथ कदम से कदम मिलाकर चल रही है । गुजरात के गज़लकार एवं गीतकार दलबंदियों एवं गुटबंदियों से दूर अपनी पूरी निष्ठा के साथ रचनाधर्मिता से जुड़े हुए हैं । कविवर किशोर काबरा ने सत्य ही कहा है - श्रेष्ठ की स्वीकृति और निकृष्ट की उपेक्षा गुजरात का स्वभाव है । आधुनिक गज़लों का भविष्य उज्जवल है । आशा है उनका योगदान ऐतिहासिक प्रमाणित होगा ।

अन्य काव्य रूपों में मुकम्मल (अ.पृ.) क्षणिकाएँ, तुक्तक, द्विपदियाँ, दोहा, साखी, तराना, चार्विनें, लावनी वगैरह है । क्षणिकाएँ उस काव्य रूप को कहते हैं जिसमें एक क्षण की गहन अनुभूति को कम शब्दों में व्यक्त किया जाता है । इसका अपर नाम हाशिये की कविता भी है ।

तुक्तक व व्यंग्य प्रधान रचना होती है जो अपने में स्वतंत्र होती है । जिसमें कम शब्दों के द्वारा तीखा व्यंग्य किया जाता है । कभी कभी उसमें किसी रचना का आधार लेकर भी व्यंग्य किया जाता है ।

<u>दोहा :</u> आजकल कवि प्राचीन काव्य रूप दोहा की ओर अधिक आकृष्ट हुए हैं और अपने भावों को व्यक्त करने के लिए इसका प्रयोग करते हैं । अब तो हिन्दी गज़लों में भी दोहों का आधार लिया जा रहा है और इस दृष्टि से फारसी -

---

1. गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी : डॉ० नागर, डॉ० पाठक : पृ० 46।

उर्दू की प्रचलित बहरों - शेरोंवाली पद्धति के स्थान पर दोहों पर आधारित गज़लें भी लिखी जा रही है । यह "दोहा" की विशेषता है अथवा क्षमता विशेष है कि वह पद भजन के पूर्व मध्य अंत में साखी के रूप में प्रस्तुत किए जाते रहने के साथ-साथ अब गज़लों के शिल्प निर्माण में भी सशक्त भूमिका अदा कर रहा है ।

आज के परिप्रेक्ष्य में पत्र पत्रिकाएँ, कवि सम्मेलनों, कवि गोष्ठियों के माध्यम से पुनः दोहा छंद आगे बढ़ रहा है । समकालीन दोहाकारों में सर्वश्री निदाफाजली, कुंअर बेचैन, डॉ० श्रीहरि, सूर्यभानु गुप्त, कैलाश गुप्त, दिनेश शुक्ल, भगवानदास जैन, दयाचंद, देवेन्द्रशर्मा "इन्द्र" आदि के दोहे । रेतलसरा, भाषासेतु, साहित्य संहिता, कादम्बिनी, नवनीत आदि सामयिकों में नियमित रूप से प्रकाशित होते रहे हैं । एक अंदाज के अनुसार 1995 तक करीब 20 हजार दोहे प्रकाशित हो चुके हैं ।

<u>वायिने :</u> गुजरात में सूरत जिले का बहुत प्रचलित छोटा काव्य रूप है । इनका कमसीन लड़कियों के मुँह से सुनना परम आल्हादक है । कवि "पतील" ने वायिनें लिखे हैं । इसमें प्रायः लघु लघु तीन पंक्तियों का एक एकत्रित ﴾युनिट﴿ होता है, ऐसे कई एकमों के द्वारा कवि अपने मनोगत विषय को मुक्तक के साथ व्यक्त करता है ।

> मरे बाड़े में जांबुन के तरु भाये
> जांब उन्हें जब आए
> तो क्या खुशियाँ हुई ।[1]

गुजरात के आधुनिक लावणीकारों में पतील का नाम ले सकते हैं । लावणी भी एक काव्य प्रकार रहा है । जैसे -

> हम गये चुरावन बेर पियाहन भरे
> बेर जब आये संग में हमरे सरदार, मुरार बनभाये ।[2]

---

1. जाँब का फल ﴾नयी तर्जें﴿ : पतील : पृ0 22
2. "बेर की चोरी" ﴾नयी तर्जें﴿ : पतील : पृ0 25